कातन्त्र व्याकरण

डा० भगीरथ प्रसाद त्रिपाठी 'वागीश' शास्त्री
संपूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

व्याकरण की परंपरा और कातन्त्र व्याकरण का स्थान

भारत में वेदार्थों की व्याख्या के लिये चिरकाल से प्रातिशाख्य, निरुक्त और व्याकरण के रूप में शब्दानुशासन की वृहत् परम्परा पाई जाती है। प्रातिशाख्यों में पद-विभाग आदि के रूप में वर्णित प्रक्रिया वेदों के शब्दानुशासन की अंशतः ही व्याख्या करती है। यास्कीय निरुक्त में बताया गया है कि निरुक्त के लिये व्याकरण का ज्ञान आवश्यक है। इसलिये व्याकरण-रूप शब्दानुशासन निरुक्त से प्राचीन है। यद्यपि प्राचीन भारतीय वाङ्मय व्याकरणों के नाम पाये जाते हैं, फिर भी प्रकरणाधारित होने से उस परम्परा के अनेक व्याकरण लुप्त हो गये। लेकिन इनमें माहेशी परम्परा आज भी जीवित है। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि माहेन्द्री परम्परा भी आंशिक रूप से जीवित है। शब्दानुशासन की यह परम्परा दो प्रकार की है मातृका पाठ-रूप (विस्तृत) और प्रत्याहार रूप संक्षिप्त। आजकल विद्यमान सभी व्याकरण ग्रन्थ प्रायः प्रत्याहर-रूप द्वितीय परम्परा का अनुसरण करते हैं।

तैत्तिरीय संहिता-अनुसार वाक्-व्याख्यान में लिये देवों ने इन्दु से प्रार्थना की। इस आधार पर माहेन्द्री परम्परा महेन्द्र के गुरु वृहस्पति ने प्रचलित की है। उसका विस्तार देखकर भगवान् पतंजलि ने अपने महाभाष्य में बताया है कि वृहस्पति ने इन्द्र को यह व्याकरण एक हजार वर्ष तक पढ़ाया पर समाप्त नहीं हो पाया।

आठवीं के हरिभद्र सूरि ने बताया कि जैनेन्द्र व्याकरण (देवनंदि पूज्यपाद) ही ऐन्द्र-व्याकरण है। अठारवीं सदी में उत्पन्न राजर्षि ने अपने 'भगवत् वादिनो' नामक ग्रन्थ में बताया है कि ऐन्द्र व्याकरण (जै० व्या०) भगवान् महावीर-प्रणीत है और इसके समर्थन में अनेक तर्क दिये हैं। इस ग्रन्थ में जैनेन्द्र व्याकरण का सूत्रपाठ ही दृढ़बद्ध है। पूज्यपाद ने पाणिनि के व्याकरण पर 'शब्दावतार न्यास' नामक टीका है। पाणिनि के पूर्ववर्ती व्याकरणों के अनेक सिद्धन्त भी जैनेन्द्र व्याकरण में पाये जाते हैं। लेकिन इससे 'जैनेन्द्र व्याकरण' को ऐन्द्र व्याकरण नहीं कहा जा सकता। जैनेन्द्र शब्द में इन्द्र-शब्द होने से ऐसा आभास हुआ है। कुछ विद्वानों की मान्यता है कि जैनेन्द्र व्याकरण देवनंदि आचार्य ने बनाया है जिनका दूसरा नाम जिनेन्द्र बुद्धि भी है।

महेन्द्र व्याकरण विस्तृत है और समय-साध्य है। इसलिये महामुनि पाणिनि ने महेश परम्परा में प्रत्याहार-रूप प्रथम संक्षिप्त शब्दानुशासन बनाया। इसलिये इसमें कोई आश्चर्य नहीं करना चाहिये कि महेन्द्र परम्परा के अन्य व्याकरण पाणिनीय व्याकरण से विस्तृत हैं। पाणिनि व्याकरण में भी प्राचीन व्याकरणों के अनेक सूत्र पाये जाते हैं। उसने इसे अनेक आचार्यों के नाम सादर दिये हैं जिनके मत उसने ग्रहण किये हैं। प्रत्याहर-सूत्रों के अतिरिक्त पाणिनि की अष्टाध्यायी में बहुतेरे सूत्र प्राचीन व्याकरणों से लिये गये हैं। यह तथ्य सूत्रों के तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है।

जैन और बौद्ध-व्याकरण अवैदिक हैं, फिर भी वे अंशतः महेन्द्र परम्परा का अनुकरण करते हैं। इसके बावजूद भी वे पाणिनीय व्याकरण के महत्व को स्वीकार करते हैं। इसीलिये अन्तरवर्ती वैयाकरण पाणिनि के प्रत्यार-सूत्र क्रम को समाविष्ट करने का लोभ संवरण नहीं कर पाये।

कातन्त्र का नामकरण

वर्तमान में उपलब्ध कातन्त्र व्याकरण पाणिनि का उत्तरकालीन शब्दानुशासन है। यह विस्तृत महेन्द्र परम्परा का है। इसमें महेन्द्र परम्परा की संक्षिप्त प्रत्याहार-प्रक्रिया नहीं अपनाई गई है। कातंत्र-व्याकरण के नाम के विषय में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विद्वानों के अनेक मत हैं, फिर भी इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह किसी वृहत्तंत्र से संक्षेपित हुआ है। इसके नाम की व्याख्या निम्न रूपों में की गई है।

दुर्गसिंह	कु = लघु तंत्र	ही का तंत्र है।
	कुत्सि तंत्र	का तंत्र है।
	कार्तिकेय तंत्र	का तंत्र है।
दुर्गसिंह	कात्यायन तंत्र	का तंत्र है।
	काशकृत्स्न तंत्र	का तंत्र है।
हेमचन्द्र	कालापक तंत्र	का तंत्र है।
अग्निपुराण, वायुपुराण	कुमार-स्कन्द-प्रोक्त तंत्र	का तंत्र है।

यह स्पष्ट है कि कातंत्र में प्रथम अक्षर के साथ तंत्र शब्द जोड़कर कातंत्र नाम रखा गया है। इससे भिन्न-भिन्न मतवादी भिन्न-भिन्न व्याकरणों से इसके संक्षेपण की सूचना देते हैं। कातंत्र व्याकरण किसी वृहत्तंत्र से संक्षेपित किया गया है, यह मान्यता दसवीं सदी के वृत्तिकारों में प्रचलित रहती है। भगवत कुमार कार्तिकेय के द्वारा प्रणीत शास्त्र के बाद उनकी आज्ञा से सर्ववर्मन ने इसे बनाया, इसलिये इसे **कौमार तंत्र** भी कहा जाता है। इसकी प्रसिद्धि कौमार तंत्र के रूप में मानी जाती है, यह ज्ञातव्य है कि कुमार कार्तिकेय चौरशास्त्राचार्य के रूप में विश्रुत हैं, व्याकरणशास्त्राचार्य के रूप में नहीं। 'कुमार' के भी अनेक अर्थ लगाये गये हैं। कुमारी-सरस्वती से प्राप्त होने के कारण इसे कौमार तंत्र कहते हैं। मोर के पंखधारी को कलाप कहते हैं। त्रिविष्टपी परम्परा के अनुसार कातंत्र का उपदेश मयूरपच्छियों के मध्य किया गया है। जैन साधु मोर-पंखों से बनी पीछी को धारण करते हैं और उपदेश देते हैं। इसलिये इसे कालापक तंत्र भी कहते हैं।

कातंत्र व्याकरण के कर्ता और उसका समय

भावसेन ने अपनी 'कातंत्र रूपमाला' में श्री शर्ववर्मन् को कातंत्र व्याकरण का रचयिता माना है। शर्ववर्मा का ही दूसरा नाम वररुचि है। उन्होंने ही ऐन्द्र व्याकरण को संक्षिप्त कर कातंत्र व्याकरण बनाया है। यह त्रिविष्टपीय विद्वत् परम्परा मानती है। दुर्गसिंह ने बताया है कि कातंत्र का कृदन्त भाग वररुचि ने लिखा है। वह वार्तिककार कात्यायन से भिन्न है, उससे परवर्ती है। इन्होंने प्राकृतप्रकाश ग्रन्थ भी बनाया है। इनका दूसरा नाम श्रुतिधर भी था। ये तीसरी सदी में हुए थे। महाभाष्यकार शर्ववर्मन के बाद हुए हैं, यह कथन सत्य नहीं है। 'कथासरित् सागर' के अनुसार, प्राकृत भाषावेत्ता सात वाहन की राजसभा में गुणाढ्य और सर्ववर्मा नाम के ख्यातिप्राप्त विद्वान् थे। इसके ही अनुसार, राजा दीपकर्णि का पुत्र सातवाहन था जो संस्कृत भाषा नहीं जानता था। सम्भवतः यह सिंह की सवारी करता था, इसीलिये इसका नाम सातवाहन पड़ा। [इसके सात वाहन (अश्वादि, सप्तिवाहन) थे, इसलिये भी इसका नाम सातवाहन हो सकता है।] इसका एक अन्य नाम 'शक्तिवाहन' भी माना जाता है। 'शक्तिहोत्र' शब्द से शक्ति का भी वाहनार्थकत्व सिद्ध होता है। ऐतिहासिक प्रमाणों से पता चलता है कि आन्ध्र के राजाओं ने राज्य का विस्तार किया और 'सातवाहन' पदवी ग्रहण की। इनमें सातकर्णि द्वितीय छठा सातवाहन राजा हुआ। कथासरित् सागर के अनुसार, इसी का नाम 'दीपकर्णि' रहा है। सातवाहन वंश में सातवाँ राजा 'हाल' नामधारी हुआ। इसी प्राकृत प्रेमी राजा की राजसभा में गुणाढ्य और शर्ववर्मन थे। इसी राजा के राज्यकाल में कातंत्र व्याकरण का निर्माण हुआ। इस राजा का समय प्रथम सदी (२०-२४ ई०) निर्धारित है। इसी का समकालीन शूद्रक नाम का राजा हुआ जिसने पद्मप्राभृत में कातंत्र व्याकरण का उल्लेख किया है। राजा पुष्यमित्र के समकालीन महाभाष्यकार पतंञ्जलि का समय ईसा पूर्व दूसरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सदी निश्चित है। फलतः शर्ववर्मन पतंञ्जलि का पर्याप्त उत्तरवर्ती है। फिर भी युधिष्ठिर मीमांसक इसे सातवाहन से भी पूर्ववर्ती मानते हैं।

इस ग्रन्थ के कर्ता जैन थे या अजैन, इस पर विद्वानों का मत स्पष्ट नहीं है। एक ओर सोमदेव शर्ववर्मन् को अजैन मानते हैं, वही भावसेन त्रैविद्य (१२–१३ सदी) और हेमचंद्र उन्हें जैन मानते हैं। इसके 'सिद्धो वर्णसमाम्नायः' नामक प्रथम सूत्र में 'सिद्ध' शब्द का होना इसे जैनकर्तृक प्रमाणित करता है। इसके सभी टीकाकार प्रायः जैन ही हुए हैं। इसका जैनों में ही प्रचार भी अधिक रहा है। इस व्याकरण के अन्तःपरीक्षण से भी इसके जैन-कर्तृक होने का आभास मिलता है।

कातन्त्र व्याकरण की टीकायें और वृत्तियां

ग्रन्थकर्ता के अनुसार, यह ग्रन्थ अल्पमति, आलसी, लोकयात्री, वणिक् आदि सामान्यजनों के 'शीघ्रबोध' के लिये लिखा गया है। इसीलिये यह इतना लघु, सरल एवं सहज कण्ठस्थनीय है। इसकी लोकप्रियता के कारण ही यह बौद्धों के लिये उपयोगी बना। इसका प्रचार भारत के बाहर तिब्बत में भी हुआ। पर वर्तमान में इसका प्रचलन मुख्यतः बंगाल में है। इसकी लोकप्रियता का एक प्रमाण यह भी है कि इस पर अनेकों टीकायें एवं वृत्तियाँ लिखी गई। इनका कुछ विवरण सारणी १ में है।

सारणी १

कातंत्र व्याकरण की टीकायें/वृत्तियाँ

	टीकाकार/वृत्तिकार	समय, वि०	टीका/वृत्ति नाम
१.	दुर्गसिंह		कातंत्र-वृत्ति
२.	विजयानंद (विद्यानंद)	१२०८	कातंत्रोत्तर व्याकरण
३.	भावसेन त्रैविद्य	११५०–१२५०	कातंत्र रूपमाला
४.	जिनप्रबोधसूरि	१३२८	दुर्गपद प्रबोध
५.	संग्रामसिंह	१३३६	बालशिक्षा
६.	जिनप्रभ सूरि	१३५२	कातंत्र विभ्रम टीका
७.	प्रद्युम्न सूरि, आचार्य	१३६९	दौर्गसिंही वृत्ति
८.	मेरुतुंग सूरि	१४४८	बालबोध व्याकरण
९.	वर्धमान	१४४८	कातंत्र विस्तर
१०.	मुनि चरित्र सिंह	१६३५	कातंत्र विभ्रम टीका
११.	हर्षचन्द्र		कातंत्र-दीपक
१२.	धर्मघोष सूरि	१३००–१४००	कातंत्र निबंध
१३.	आचार्य राजशेखर सूरि		वृत्तित्रय निबंध
१४.	सोमकीर्ति		कातंत्र-वृत्तिपर पंजिका
१५.	पृथ्वीचंद्र सूरि		कातंत्र रूपमाला लघुवृत्ति
			कातंत्र रूपमाला-टीका
१६.	सकलकीर्ति–२		कातंत्र रूपमाला लघुवृत्ति
१७.	आचार्य रविवर्मा		कातंत्र व्याकरणवृत्ति
१८.	पन्नालाल वाकलीवाल		बाल बोध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इससे स्पष्ट होता है कि हेम और सारस्वत व्याकरण के समान यह अपने समय में अत्यन्त महत्वपूर्ण व्याकरण रहा होगा जिससे समस्त संस्कृतवेत्ता प्रभावित हुए और इसे उपयोगी मानते रहे। ऐसा माना जाता है शाकटायन व्याकरण पर कातंत्र व्याकरण का गहन प्रभाव है, यद्यपि उसमें प्रत्याहार शैली को अपनाया गया है। हेमचंद्राचार्य भी शाकटायन से प्रभावित हैं। फलतः वे भी परोक्षरूप से कातंत्र से प्रभावित हैं। वस्तुतः हेमचंद्र ने ही इसे कलापक-तंत्र कहा है। उत्तरवर्ती वैयाकरण भी इससे प्रभावित रहे हैं।

कातंत्र व्याकरण अन्य व्याकरणों की अपेक्षा संक्षिप्त और सरल है। इसमें सूत्रों की संख्या भी कम है। इसमें पाणिनि के ४१११ सूत्रों की तुलना में कुल १४०० सूत्र ही हैं। इसमें संज्ञाओं का स्वतंत्र प्रकरण नहीं है, उन्हें सन्धिपाद में ही निरूपित किया गया है। इसमें व्याकरण में उपयोगी तद्धित, कृदन्त, तिङन्त आदि अन्य सभी प्रकरण संक्षेप में हैं। इसके तिङन्त प्रकरण में कालवाची क्रियाओं का नामकरण विशिष्ट रूप में किया है। इसका अनुकरण हेमचंद्राचार्य ने भी किया है। इसमें विराम में अनुस्वार होने की विशेषता भी पाई जाती है। इस बात की महती आवश्यकता है कि इसका वैज्ञानिक रूप से सुसंपादित संस्करण प्रकाशित किया जावे।

□

जैन व्याकरणों का संक्षिप्त विवरण

१.	ऐन्द्र व्याकरण	इन्द्र आचार्य	ई० पू० छठवीं सदी	
२.	कातंत्र व्याकरण	आ० सर्ववर्मन्/वररुचि	तीसरी सदी	८८५/१४०० सूत्र १८ टीका
३.	जैनेन्द्र व्याकरण	पूज्यपाद आचार्य	पांचवीं सदी	पंचाध्यायी, अनेकशेष ३०००/३७०० सूत्र
४.	क्षपणक व्याकरण	क्षपणक/सिद्धसेन	छठवी सदी	
५.	शाकटायन व्याकरण	शाकटायन पाल्यकीर्ति	नवमी सदी	चार अध्याय १० वृत्ति/टीकायें
६.	पंचग्रन्थी व्याकरण	बुद्धिसागर सूरि	१०२३	१६ पाद, ३२३६ सूत्र
७.	सिद्ध हेमचंद्र शब्दानुशासन	आ० हेमचंद्र	१०८८	६ टीकायें ८ अध्याय ५६५१ सूत्र
८.	पंचग्रन्थी व्याकरण	बुद्धिसागर सूरि	१०८०	
९.	प्रेमलाभ व्याकरण	मुनिप्रेमलाभ	१२२६	
१०.	मलयगिरि शब्दानुशासन	मलयगिरि	११३१–११९३	
११.	सारस्वत व्याकरण	अनुभूति स्वरूप	१५वीं सदी	२७ टीकायें ७०० सूत्र २३ टीकायें
१२.	जैन व्याकरण	यशोभद्र		
१३.	जैन व्याकरण	आर्य वज्रस्वामी		
१४.	जैन व्याकरण	भूतबली		
१५.	जैन व्याकरण	श्रीदत्त		
१६.	जैन व्याकरण	प्रभाचंद्र		
१७.	जैन व्याकरण	सिंहनन्दि		
१८.	विद्यानन्द व्याकरण	विद्यानंद	१२६५ ई०	
१९.	नूतन व्याकर	जयसिंह सूरि	१३८३	
२०.	दीपक व्याकरण	भद्रेश्वर सूरि	तेरहवीं सदी	
२१.	चिन्तामणि व्याकरण	आचार्य शुभचंद्र	१५४८	
२२.	शब्दार्णव व्याकरण	मुनि सहजकीर्ति	१६२३	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org